नागरिकता कानून: राजनीतिक इतिहास का महत्वपूर्ण बिंदु

अभिनव प्रकाश

यह एक ऐतिहासिक क्षण था जब नागरिकता संशोधन विधेयक (2019) संसद द्वारा पारित किया गया. संसद में एक सार्थक एवं तथ्यपूर्ण चर्चा के उपरांत नागरिकता संशोधन विधेयक, 2019 पारित हुआ. 12 दिसंबर 2019 को इस विधेयक को राष्ट्रपति ने अपनी मंजूरी दी और भारत के आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशित होने के साथ ही अब यह अधिनियम (कानून) बन गया है. यह अधिनियम अफगानिस्तान, पाकिस्तान और बांग्लादेश से 31 दिसंबर, 2014 से पहले भारत में आए गैर-मुस्लिमों को भारतीय नागरिकता प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा. इन तीनों देशों (जो घोषित रूप से इस्लामिक देश हैं) में धार्मिक रूप से प्रताड़ित होने वाले हिंदू, सिख, ईसाई, बौद्ध, जैन और पारसियों को अब वापस इन देशों में नहीं भेजा जाएगा और उन्हें भारत की नागरिकता दी जाएगी.

इस अधिनियम के प्रभाव में आने के साथ ही लियाकत-नेहरू समझौते की विफलता के बाद लंबे समय से पड़ोसी देशों में धार्मिक रूप से प्रताड़ित अल्पसंख्यकों की रक्षा की मांग भी पूरी हुई है. यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि यह मांग राम मंदिर, अनुच्छेद 370 को निरस्त करने की मांग या समान नागरिक संहिता की मांग से भी पुरानी थी. 1950 में डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने नेहरू लियाकत समझौते के विरोध में नेहरू के मंत्रीमंडल से इस्तीफ़ा दिया था. उन्होंने तर्क दिया कि यह समझौता पाकिस्तान के गैर-मुस्लिमों को उनके हाल पर छोड़ देने की बात करता है और पाकिस्तान पर आश्रित है, लेकिन पाकिस्तान अपने यहाँ अल्पसंख्यकों की चिंता नहीं करता है.

पाकिस्तान और बांग्लादेश से धार्मिक उत्पीड़न की वजह से पलायन कर रहे अल्पसंख्यकों को शरण देने और उन्हें नागरिकता देने की मांग जनसंघ के समय से होती चली आ रही है. इन अल्पसंख्यकों को नागरिकता दिए जाने की मांग को भाजपा ने अपने 2014 और 2019 के घोषणापत्रों में भी प्रमुखता से रखा था. शत्रुतापूर्ण रवैये वाले विपक्ष के विरोध के बावजूद भाजपा ने अपने चुनावी घोषणापत्र के एक और वादे को पूरा किया है.

यह क़ानून मानवीय गरिमा को बहाल करते हुए जरूरतमंद व्यक्ति को बेहतर जीवन प्रदान करता है. यह महत्वपूर्ण इसलिए भी है क्योंकि यह उन धार्मिक अल्पसंख्यकों की पहचान करता है जिनके समर्थन में एक भी आवाज नहीं उठाई गई. बहुत लंबे समय तक उनके साथ अनाथों की तरह व्यवहार किया गया. उन्हें अमानवीय भेदभाव, बहिष्कार, जबरन धर्मांतरण जैसी यातनाएं दी गईं. इसलिए यह क़ानून मानवतावाद के लिहाज से बेहद महत्वपूर्ण है.

यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि अधिकांश हिंदू शरणार्थी दलित और अन्य शोषित जातियों से हैं, जो विभाजन के दौरान पलायन करने में असमर्थ थे या उन्हें इस्लामिक गणराज्य पाकिस्तान में नौकर दर्जे के छोटे कामों के लिए जबर्दस्ती बंदी बनाकर रखा गया और उन्हें भारत आने की अनुमति नहीं थी, लेकिन अब उन सभी शरणार्थियों को भारतीय गणतंत्र का नागरिक बनकर एक उम्मीद की किरण नजर आती है. यह प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी की इच्छाशक्ति और गृहमंत्री श्री अमित शाह की प्रतिबद्धता थी जिसने इसे संभव बनाया.

नए अधिनियम का विरोध मुख्यतः दो बातों को लेकर हो रहा है. पहला, यह मुसलमानो के साथ भेदभाव करता है और दूसरा, यह भारत के नार्थ-ईस्ट राज्यों की जनसांख्यिकी को खतरे में डालता है. मुसलमानो से भेदभाव का आरोप वही विपक्षी दल लगा रहे हैं, जिन्होंने बहुत पहले ही भारत-अमेरिका परमाणु समझौते तक को मुस्लिम विरोधी करार दिया था. उनका मुख्य तर्क यह है कि यह संशोधन पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान के मुसलमानो के साथ भेदभाव करता है और यह संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता है, लेकिन, अनुच्छेद 14 का अर्थ सभी के साथ समान व्यवहार करना है, धार्मिक, जाति, लिंग आदि के स्तर पर किसी के साथ भेदभाव किए बगैर.

यह अधिनियम इन तीन देशों से आने वाले किसी भी विदेशी मुस्लिम को भारत का नागरिक बनने से नहीं रोकता है. अंतर केवल इतना है कि नागरिकता की मांग करने वाले व्यक्ति को उचित मानक प्रक्रियाओं का पालन करना होगा. इसलिए, देश के धर्मनिरपेक्ष ताने-बाने के साथ भेदभाव और इसके उल्लंघन का तर्क एकदम निराधार है.

यह अधिनियम केवल तीन आधिकारिक इस्लामी देशों के धार्मिक अल्पसंख्यकों पर केंद्रित है. यहां तक कि दुनिया के अन्य देशों के हिन्दुओं को भी मुसलमानो के समान तय प्रक्रियाओं का पालन करना होगा, तभी उन्हें भारत की नागरिकता प्राप्त होगी. इस बात पर सवाल उठाए गए हैं कि उत्पीड़ित मुस्लिम संप्रदाय जैसे अहमदी, शिया या अन्य जैसे बलूच आदि को शामिल क्यों नहीं किया गया है? लेकिन यह अधिनियम केवल धार्मिक

अल्पसंख्यकों के लिए है, बलूच या हज़ारा जैसी जातियों के लिए नहीं. यह धार्मिक उत्पीड़न के शिकार लोगों के लिए है, न कि राजनीतिक रूप से संघर्ष कर रहे लोगों के लिए. अहमदियों को भारत द्वारा अल्पसंख्यक नहीं माना गया है और इस्लाम के अंदर धार्मिक या साम्प्रदायिक विरोधाभास से भारत का दूर रहना ही अच्छा है. अधिनियम के खिलाफ विपक्ष की ऐसी सभी आपत्तियाँ खोखली हैं और यह सिर्फ विरोध के लिए विरोध करने जैसी बात है.

नार्थ-ईस्ट के लोगों की एकमात्र वैध चिंता यह है कि इस अधिनियम से स्थानीय जनसांख्यिकी बदल सकती है. इन चिंताओं को दूर करने के लिए अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड और मिजोरम को अधिनियम से बाहर रखा गया है और मणिपुर को इनर लाइन परमिट के माध्यम से संरक्षित किया गया है. असम, मेघालय और त्रिपुरा में 6वीं अनुसूची के अंतर्गत आने वाले क्षेत्रों को भी बिल के दायरे से बाहर रखा गया है. इससे आने वाले शरणार्थी भारत के अनेक हिस्सों में जाकर निवास कर सकेंगे. जैसा कि विभाजन के दौरान तिब्बतियों और शरणार्थियों के साथ किया गया था. यह उत्तर-पूर्व के सीमावर्ती राज्यों पर जनसांख्यिकीय बोझ को कम करेगा, क्योंकि यहीं सबसे ज्यादा अप्रवासी बांग्लादेश से आते हैं.

नया अधिनियम भारत के राजनीतिक इतिहास में भी एक महत्वपूर्ण बिंदु है क्योंकि यह पहली बार है जब भारत अंतर्राष्ट्रीय मंच पर हिन्दुओं के अधिकारों के लिए खड़ा हुआ है. इसी के साथ ही हमने दुनियाभर में सताए गए धार्मिक अल्पसंख्यकों को सुरक्षित स्थान प्रदान करने की अपनी सभ्यता और परंपरा को पुनः प्रमाणित किया है.

(लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय में असिस्टेंट प्रोफेसर हैं. लेख में व्यक्त उनके विचार निजी हैं.)